UNIVERSAL
LIBRARY

OU_176402

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81 S62H

Accession No. P. G. H 82

Author शिवमंगलसिंह 'सुमन'.

Title हिल्लोल. 1946.

This book should be returned on or before the date last marked below.

हिल्लोल

हिल्लोल

शिवमंगलसिंह 'सुमन'

सरस्वती प्रेस
बनारस

सर्वाधिकार लेखक द्वारा सुरक्षित :

प्रकाशक—
सरस्वती प्रेस, बनारस

द्वितीय संस्करण
सितंबर १९४६
मूल्य २)

मुद्रक—
श्रीपतराय
सरस्वती प्रेस, बनारस

साहस हृदय में दो अमर
चूमूँ तरंगों के अधर
नौका भँवर में डालकर, चाहे न फिर पतवार दो,
मुझको न सुख-संसार दो।

आमुख

'सुमन' के इस नवीन अर्धोन्मीलित विकास का भी मैं अभिनन्दन करता हूँ; क्योंकि उसमें सौरभ है, मकरन्द है और है गन्धवाह की लहरों में बहकर गमक उठने की शक्ति।

'सुमन' उपचार-सापेक्ष स्नेह का मान रखते हुए भी उस संसार-प्रेम के निष्काम उपासक हैं, जो बिना किसी बाह्य आश्रय के समस्त विश्वजनीन सम्बन्धों का अटल आधार-स्तंभ है। 'सुमन' के रोने में भी एक दृढ़ता है और तड़पने में भी एक आत्मप्रतीति।

'सुमन' में दार्शनिक तटस्थता है, जिसका आभास उनकी पंक्तियों में यत्र-तत्र मिलता है। यह उनकी सहज अनुभूतियों का भागधेय है, संसर्गज विचारों का अपरिपक्व परिणाम नहीं। आशा है, आगे चलकर इसका निखरा रूप 'सुमन' के पूर्ण विकास में उदार योग देगा।

'सुमन' में कहने की क्षमता है। अव्यक्त भास्वर रूप उनकी व्यक्त पदावली में देखने की इच्छा हो तो 'मेरे पावन, मेरे पुनीत' को गुनगुनाइए, व्यक्त सत्ता का व्यक्त पदावली मार्मिक निरूपण पाना हो तो 'हा! प्रसाद' पढ़िए।

इच्छा तो थी कि और लिखूँ, पर न तो 'सुमन' ही अभी खुल खिले हैं और न मेरा ही जी भरा गया है; अतः फिर कभी।

काशी-विश्वविद्यालय
शारदी पूजा का प्रथम दिन
१९९६

केशवप्रसाद

अपने विषय में

अपने ही हृदय के विषय में कुछ कह सकूँगा, अथवा मुझे कुछ कह सकने का अधिकार भी है, यही मेरी समझ में नहीं आता। जीवन के सुख-दुःख, आशा-निराशा-पूर्ण क्षणों में प्राणों को मथकर जो भी अर्धस्फुट तुतले शब्द आवेशवश अथवा स्वभावतः निकल पड़े हैं, बिना किसी आवरण के आपके समक्ष प्रस्तुत हैं। कवि होने का दावा करने का मैं दुस्साहस नहीं कर सकता। अपनी अपूर्णता से असंतोष एवं क्षोभस्वरूप जो विह्वलता मेरे अंतर में तूफान-सा मचाये रहती है, उसीको इन टूटी-फूटी तुकबन्दियों के रूप में लेकर, मेरी अच्छी माँ! तुम्हारे द्वार पर कंपितकरों से वरदहस्त के भिखारीरूप में नतशिर खड़ा हूँ। अपने प्रयास की सफलता-असफलता की इसीलिए न तो मुझे तनिक चिन्ता ही है और न विशेष उत्सुकता ही। जिसके सामने धूल-धूसरित नग्न फिर-फिरकर, मिट्टी के घरौंदे बना-बनाकर ढहाता रहा उसीके सामने इस नये रूप में उपस्थित होने में मुझे किसी प्रकार की लज्जा क्यों होने लगी? माँ! उस रूप को भी तुम्हारे ही लाड़-प्यार ने सँवारा था, इसे भी....अस्तु—

तुम्हारे ही उपवन का
'सुमन'

सूचनार्थ

हिल्लोल मेरी प्रथम प्रकाशित रचना है अतएव उसके लिए भूमिका न तो पहले ही अपेक्षित थी और न अब ही। सूचनार्थ केवल यही कहना है कि इसका दूसरा संस्करण प्रेषित कर सकने में लगभग छः वर्ष का विलम्ब हो गया। कारण मात्र मेरा प्रमाद है। जिन लोगों ने इस बीच मुझे पत्र लिखे हैं इसके विषय में अथवा आर्डर भेजकर निराश हुए हैं, उनके सम्मुख विनीत क्षमाप्रार्थी हूँ। द्वितीय संस्करण में मैंने उसी काल की कुछ अवशिष्ट रचनाएँ भी सम्मिलित कर दी हैं, अब भी बहुत-सी रह गई हैं। उनमें बहुत-सी व्यक्तिगत होने के कारण शायद ही कभी दिन का प्रकाश देख सकें। यह भी सम्भव है कि कभी अपेक्षित साहस जुटा सकूँ। जो भी हो, यह उलझन भविष्य के लिए ही छोड़े देता हूँ।

१२ सितम्बर, '४६ शिवमंगलसिंह 'सुमन'

क्रम

शीर्षक पृष्ठ
१—परिचय ... १७
२—मेरे जीवन के पहचाने ... २०
३—मैं सूने में मन बहलाता ... २२
४—मेरे पावन, मेरे पुनीत ... २३
५—उपहार है, उपहार है ... २५
६—वरदान है, वरदान है ... २६
७—स्वीकार है, स्वीकार है ... २७
८—इतना तो नेह निभा देना ... २८
९—क्या हैं ? ... ३०
१०—देखो, मालिन, मुझे न तोड़ो ... ३१
११—मुझसे वह कितना दूर-दूर ... ३२
१२—पत्थर के थे देव हमारे ... ३४
१३—राही, एक बार फिर आना ... ३५
१४—चलना हमारा काम है ... ३७
१५—चलें ... ४०
१६—क्या कर लेती हो याद मुझे ? ... ४२
१७—आज तो मुझमें जवानी ... ४७
१८—पनिहारिन ... ४९
१९—खोज ... ५१
२०—सचमुच मुझको हैरानी है ... ५२
२१—कौतूहल ... ५३
२२—अनुरोध ... ५४
२३—सुस्मृति की झंझा के झोंके ... ५६
२४—प्राण, मुझको भूल जाओ ... ५८

शीर्षक … पृष्ठ
२५—तुमको भुलूँ भी तो कैसे ? … ६१
२६—मेरा इसमें दोष नहीं है … ६३
२७—कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं … ६४
२८—मुझको न सुख-संसार दो … ६५
२९—प्रिय, तुम इस पथ पर मत आना … ६६
३०—प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना … ६७
३१—मेरे गान तुम मत सुनो … ६९
२—अतीत … ७१
३३—आज अलि उनको बधाई … ७२
३४—मुझको तो हार अधिक भाती … ७५
३५—आज जीवन भार क्यों है ? … ७७
३६—मिलन … ७८
३७—संघर्ष-प्रणय … ८०
३८—असमंजस … ८३
३९—चुपके-चुपके रोया न करो … ८७
४०—शशिबाला से … ८८
४१—हम बड़े विकट मतवाले हैं … ९५
४२—गौरय्या … १००
४३—तितली … १०३
४४—तीन चित्र … १०६
४५—लो आ गया पतझार भी … १०८
४६—हा ! प्रसाद … ११०
४७—विश्वास फिर कैसे करूँ ? … ११३
४८—क्यों सबसे आशा रखते हो ? … ११४
४९—गुप्तजी की स्वर्ण-जयंती के अवसर पर … ११६
५०—कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ? … ११८
५१—जागरण … १२०

उसे—

जिसकी यह देन है।

परिचय

हम दीवानों का क्या परिचय ?
कुछ चाव लिए, कुछ चाह लिए
कुछ कसकन और कराह लिए
कुछ दर्द लिए, कुछ दाह लिए
हम नौसीखी, नूतन पथ पर चल दिए, प्रणय का कर विनिमय
हम दीवानों का क्या परिचय ?

विस्मृति की एक कहानी ले
कुछ यौवन की नादानी ले
कुछ-कुछ आँखों में पानी ले
हो चले पराजित अपनों से, कर चले जगत को आज विजय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम शूल बढ़ाते हुए चले
हम फूल चढ़ाते हुए चले
हम धूल उड़ाते हुए चले
हम लुटा चले अपनी मस्ती, अरमान कर चले कुछ संचय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

कुछ मान लिए, अपमान लिए
कुछ ज्ञान लिए, अज्ञान लिए
अभिशाप लिए, वरदान लिए
हम चलते जब झुक, झूम-झूम, कुछ हँसते, कुछ करते विस्मय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम लिए प्यार का भार चले
हम अपने मन को मार चले
हम अपना सब कुछ हार चले
हम छिपा चले अपने उर में, संगीत रुदनमय एक प्रलय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम जग से कर पहचान चले
हम लिए अधूरा ज्ञान चले
पर हम इतना तो मान चले
हम रहें, रह न रहें जग में, पर बना चले निज प्रणय अजय
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम उल्टी-सीधी राह चले
हम प्रणय-सिन्धु अवगाह चले,
हम निज दुर्भाग्य सराह चले,
हम चले बिना जाने-बूझे, है वहाँ भाग्य का क्या निर्णय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम जागृति में भी सोते हैं
हम पा-पाकर खो देते हैं
हम हँस-हँसकर रो देते हैं
हम अपनी असफलताओं से ही कर लेते अपना परिणय
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम चिर-नूतन विश्वास लिए
प्राणों में पीड़ा-पाश लिए
मर मिटने की अभिलाष लिए
हम मिटते रहते हैं प्रतिपल, कर अमर प्रणय में प्राण-निलय
हम दीवानों का क्या परिचय ?

हम पीते और पिलाते हैं
हम लुटते और लुटाते हैं
हम मिटते और मिटाते हैं
हम इस नन्हीं-सी जगती में बन-बन मिट-मिट करते अभिनय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

शाश्वत यह आना-जाना है
क्या अपना और बिराना है
प्रिय में सबको मिल जाना है
इतने छोटे-से जीवन में, इतना ही कर पाए निश्चय,
हम दीवानों का क्या परिचय ?

मेरे जीवन के पहचाने

नाहक मुझको दोषी न कहो—
जब पग-ध्वनि नूपुर-स्वन छाया
मैं उड़कर इस पथ पर आया
तेरा ही आकर्षण लाया
मैं तो परदेशी पंछी हूँ, मुझको न चुगाओ ये दाने
मेरे जीवन के पहचाने।

सुन्दरि! मुझको बंदी न करो—
अपने कुंचित कच-जालों में
छिन नभ, छिन पल्लव-बालों में
छिन नीड़ों में, छिन डालों में
मैं तो उड़-उड़कर जीवन-भर, गाऊँगा तेरे ही गाने
मेरे जीवन के पहचाने।

मेरे पुलकित डैने न गहो—
इस सीमित पिंजड़े के अन्दर
तुम सुन न सकोगे मेरे स्वर
कर पल्लव पल्लव में मरमर
सुनना जब खोज तुम्हारी में, निकलेंगे यह स्वर मस्ताने,
मेरे जीवन के पहचाने।

अपने हो फिर भी दूर रहो—
भय मुझे न भूलों - चूकों से
मेरी पंचम की कूकों से
देखूँगा; हिय की हूकों से
झूमोगे बन की डालों पर, बन-बनकर बौरे दीवाने,
मेरे जीवन के पहचाने।

जो कुछ सहता हूँ सहने दो—
मेरी न कभी तुम सुध लेना
मुझको यों ही उड़ने देना
जब जी में आवे कह देना,
आओ मुझमें लय हो जाओ, मेरे दीपक के परवाने,
मेरे जीवन के पहचाने।

मैं सूने में मन बहलाता

मेरे उर में जो निहित व्यथा
कविता तो उसकी एक कथा
छन्दों में रो-गाकर ही मैं, क्षण-भर को कुछ सुख पा जाता
मैं सूने में मन बहलाता।

मिटने का है अधिकार मुझे
है स्मृतियों से ही प्यार मुझे
उनके ही बल पर मैं अपने खोए प्रियतम को पा जाता,
मैं सूने में मन बहलाता।

कहता क्या हूँ, कुछ होश नहीं
मुझको केवल सन्तोष यही
मेरे गायन-रोदन में जग, निज सुख-दुख की छाया पाता,
मैं सूने में मन बहलाता।

मेरे पावन, मेरे पुनीत

जब नैश प्रकृति के अंचल में
मुसका उठते हो मंद-मंद
हो जाता है क्षण-भर मुखरित
मेरा अलसित जीवन अमंद,
करते हो आँख-मिचौनी-सी
दृग-द्वार खोल, कर पुनः बंद
बज उठता है निस्पंद पड़ी, मेरी वीणा का विरह-गीत
मेरे पावन, मेरे पुनीत।

जब सज मुक्ता-मालाओं से
कर उठते हो झिलमिल-झिलमिल
चाँदी के सूक्ष्म-सितारों-सी
रश्मियाँ विरल रिलमिल-रिलमिल
करते हो कुछ संकेत मात्र
अगणित दृग-सैनों से हिलमिल,
जग-सा जाता है क्षण-भर को विस्मृति में सोया-सा अतीत,
मेरे पावन, मेरे पुनीत।

जब झूम चूम लेते हो तुम
वारिधि के दृग की मदिर कोर,
लहरा उठता है बेसुध-सा
छल छपक-छपक हिल-हिल हिलोर
देते तुम अपने अधरों को
उसके नव-मधु में बोर बोर
विस्मित-सा देखा करता हूँ तब मैं अपनी ही हार-जीत
मेरे पावन, मेरे पुनीत।

जब ऊषा के वातायन से
तुम देखा करते उझक झाक,
जग तृण-तरु पर मृदु-कुसुमों पर
लेता सुन्दर छवि आँक-आँक
भू पर विलसित हो जाता है
कल्पित स्वप्नों का स्वर्ण-नाक
अनजाने में हो जाते हैं मेरे कुछ क्षण सुख से व्यतीत,
मेरे पावन, मेरे पुनीत।

उपहार है, उपहार है

इस प्रणय-सिंधु अथाह में
कुश-कंटकों की राह में
प्रियतम-मिलन की चाह में
मुझको मिली जो यातना-
उपहार है, उपहार है।

'कुछ शांति पाने के लिए
मन को मनाने के लिए
जग को सुनाने के लिए
मुझको मिली जो भावना-
उपहार है, उपहार है।

तूफ़ान में, मँझधार में
सुख-दुख-भरे संसार में
प्रिय-प्रीति के प्रतिकार में
मुझको मिली जो वेदना-
उपहार है, उपहार है।

वरदान है, वरदान है

जिसके लिए पागल सभी
योगी कभी, भोगी कभी
पूरी न जो होगी कभी
वह आश भी मेरे लिए
वरदान है, वरदान है।

जो जन्म से स्वार्थिन नहीं
जो पूर्ण परमार्थिन रही
सुनसान में साथिन रही
उच्छ्वास भी मेरे लिए
वरदान है, वरदान है।

जो आह बन तपती कभी
जो ज्वाल बन जगती कभी
जो बुझ नहीं सकती कभी
वह प्यास भी मेरे लिए-
वरदान है, वरदान है।

स्वीकार है, स्वीकार है

जिसके लिए सब कुछ सहा
जो हाय सपना ही रहा
जिसने मुझे अपना कहा
उसका निठुर-व्यवहार भी
स्वीकार है, स्वीकार है।

जिसने किए मधुमय अधर
जिससे हुई वाणी मुखर
जिसके मिलन का क्षण अमर
उसका विरह-उपहार भी
स्वीकार है, स्वीकार है।

जिसके सहारे मैं चला
जिससे हुई विकसित कला
जिससे हृदय को सुख मिला
उसका दिया दुख-भार भी
स्वीकार है, स्वीकार है।

इतना तो नेह निभा देना

जब जगती मुझको ठुकरा दे तब तुम आकर अपना लेना,
इतना तो नेह निभा देना।

जब प्रिय की अथक प्रतीक्षा में
ललचाएँ लोचन बेचारे
नन्हें बालक-सा मचल - मचल
मन माँग उठे नभ के तारे
तब मेरे चिर-मचले मन को क्षण-भर आकर फुसला देना
इतना तो नेह निभा देना।

जब मुखरित कर न सकें ये स्वर
सोती पीड़ा के मरमर को
जीवन से थका और माँदा
जब लौट पड़ूँ अपने घर को
पृथु-पलथी पर अस्थिर सिर धर, मेरी पीड़ा दुलरा देना,
इतना तो नेह निभा देना।

जग-पीड़ा अन्तर्निहित किए
बन दुखी हृदय की हूक उठूँ
तेरे उपवन का पंछी मैं
जब जग-मधुबन में कूक उठँ

तब मेरी कूक-हूक में तुम अपना संगीत मिला देना,
इतना तो नेह निभा देना।

जब जीवन के भीषण रण में
फूँकूँ मैं अपने शंखों को
तुम आ जाना मैं तुम्हें देख
फड़का दूँगा इन पंखों को
तब मेरे पुलकित-पंख प्रिये धीमे-धीमे सहला देना,
इतना तो नेह निभा देना।

क्या हैं ?

काँटे क्या हैं ? सुस्मृति हैं मधुभार धरे फूलों की
आहें क्या हैं ? विस्मृति हैं उन प्यार-भरी भूलों की
पीड़ा क्या है ? तड़पन है दुखियों के अंतस्तर की,
व्रीडा क्या है ? क्रीड़ा है यौवन में अजर-अमर की,
वैभव क्या है ? सपना है, इस छोटे-से जीवन का,
अपना क्या है ? खो देना, जीवन में अपनेपन का,

× × ×

संसृति के पग-पग पर उड़ती है जीवन की धूल,
चाहे फूल न रहें किन्तु हों सुस्मृति के वे शूल ।

देखो मालिन, मुझे न तोड़ो

हम तुम बहुत पुराने साथी
जगती के मधुबन में
दोनों तन-मन से कोमल हैं
फूल रहे गृह, बन में
हम उपवन का, तुम जन-मन का मधु, कण-कण कर जोड़ो
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

हम तुम दोनों में यौवन है
दोनों में आकर्षण
दोनों कल मुरझा जाएँगे
कर क्षण-भर मधुवर्षण
आओ, क्षण-भर हँस खिल मिल लें कल की कल पर छोड़ो,
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

जब जग मुझे तोड़ने आता
मैं हँस-हँस रो देता
जब तुम मुझ पर हाथ उठातीं
मैं सुधि-बुधि खो देता,
हृदय तुम्हारा-सा ही मेरा इसको यों न मरोड़ो,
देखो मालिन, मुझे न तोड़ो।

जिससे मैं मिलने को व्याकुल मुझसे वह कितना दूर-दूर

कितनी ऊषा, कितनी संध्या
कितने कुसुमों के मधुरीते
यों हीं पथ पर चलते-चलते
कितने ही संवत्सर बीते
पग शिथिल, किंतु गति मंद नहीं
यद्यपि है तन-मन चूर-चूर
जिससे मैं मिलने को व्याकुल
मुझसे वह कितना दूर-दूर ।

जिस पनिहारिन की गगरी पर
मैं ललचाया वह ढुलक गई
जिस-जिस प्याली पर धरे अधर
वह-वह छूते ही छलक गई
देखो मेरे प्रति मेरी ही
क़िस्मत है कितनी क्रूर-क्रूर
जिससे मैं मिलने को व्याकुल
वह मुझसे कितना दूर-दूर ।

मुझको पथ पर अथ से इति तक
पल-भर भी कहीं विराम नहीं
मैं राही बन कर आया हूँ
रुकने का मेरा काम नहीं
मेरे अन्तर में अन्वेषण
पैरों पर छाई धूर-धूर
जिससे मैं मिलने को व्याकुल
वह मुझसे कितना दूर-दूर ।

पत्थर के थे देव हमारे

व्यर्थ गया सब स्नेह-समर्पण
व्यर्थ गया सब पूजन-अर्चन
वे न हिले-डोले मुसकाए, हम अपना हिय हारे,
पत्थर के थे देव हमारे।

मुख पर ममता की माया थी
तन पर जड़ता की छाया थी
भिगा न पाए उनका अंचल, मेरे निर्झर खारे,
पत्थर के थे देव हमारे।

जगमग जगमग ज्योतित पाँतें
जिनको गिन गिन काटीं रातें
उनसे तो अच्छे ही निकले सूने नभ के तारे,
पत्थर के थे देव हमारे।

राही, एक बार फिर आना

तुम राही हो तुम्हें नेह क्या
कलि किसलय तरुवर से
क्षण-भर कर विश्राम चल पड़े
होगे विह्वल-घर से
पर राही, मेरे उपवन को फिर आबाद बनाना,
राही, एक बार फिर आना।

यों तो सुन्दर भवन मिलेंगे
तुमको कैसे कैसे
पथ पर पड़े बाट जोहेंगे
मेरे मूक संदेशे
मेरी विरह-व्यथा को राही एक बार अपनाना
राही, एक बार फिर आना।

आँगन के तुलसी तरुवर पर
अपने अश्रु समोए
खड़ी रहूँगी युग युग
दीपक अंचल-ओट संजोए
परदेशी, मेरे आँगन में धूल-धूसरित आना,
राही, एक बार फिर आना।

धूल पोंछ डालेंगी पलक
सीकर-श्रमित तुम्हारे
धो डालेंगे चरण शीघ्र ही
मेरे निर्झर खारे
मुझ एकाकिन के हाथों कुछ गरम गरम खा जाना,
राही, एक बार फिर आना।

सूनेपन का सोच मुझे क्या
वह तो सब दिन था ही
मुझसे बहुत प्रार्थी तुमको
मुझे न तुम-सा राही
एक बार रूठो तो मैं भी सीखूँ तनिक मनाना
राही, एक बार फिर आना।

चलना हमारा काम है

गति प्रबल पैरों में भरी
फिर क्यों रहूँ दर-दर खड़ा
जब आज मेरे सामने
है रास्ता इतना पड़ा
जब तक न मंज़िल पा सकूँ, तब तक मुझे न विराम है,
चलना हमारा काम है ।

कुछ कह लिया, कुछ सुन लिया
कुछ बोझ अपना बँट गया
अच्छा हुआ तुम मिल गईं
कुछ रास्ता ही कट गया
क्या राह में परिचय कहूँ, राही हमारा नाम है,
चलना हमारा काम है ।

जीवन अपूर्ण लिए हुए
पाता कभी खोता कभी
आशा निराशा से घिरा
हँसता कभी रोता कभी,

गति-मति न हो अवरुद्ध, इसका ध्यान आठों याम है,
चलना हमारा काम है।

इस विशद विश्व-प्रवाह में
किसको नहीं बहना पड़ा,
सुख-दुख हमारी ही तरह
किसको नहीं सहना पड़ा,
फिर व्यर्थ क्यों कहता फिरूँ, मुझ पर विधाता वाम है,
चलना हमारा काम है।

मैं पूर्णता की खोज में
दर-दर भटकता ही रहा
प्रत्येक पग पर कुछ-न-कुछ
रोड़ा अटकता ही रहा
पर हो निराशा क्यों मुझे? जीवन इसी का नाम है,
चलना हमारा काम है।

कुछ साथ में चलते रहे
कुछ बीच ही से फिर गए,
पर गति न जीवन की रुकी,
जो गिर गए सो गिर गए,
चलता रहे शाश्वत, उसीकी सफलता अभिराम है,
चलना हमारा काम है।

मै तो फ़क़त यह जानता
जो मिट गया वह जी गया
जो बंद कर पलकें सहज
दो घूँट हँसकर पी गया
जिसमें सुधा-मिश्रित गरल, वह साक़िया का जाम है,
चलना हमारा काम है।

चलें

हम लेकर हृदय अधीर, प्राण में पीर, नयन में नीर चले
हम दीवाने युग-युग की बंदी प्राचीरों को चीर चले,
हम लिए अचल अनुराग हृदय में दाग आह में आग चले
हम लिए अनोखा एक निराला एक बेसुरा राग चले,
हम लिए एक अभिमान एक अरमान एक तूफ़ान चले
हम परवाने ले दुनिया से जल मरने का सामान चले,
हम लेकर एक उसास, एक निःश्वास, एक उच्छ्वास चले
जो जनम-जनम तक बुझ न सके हम लेकर ऐसी प्यास चले,
हम एक अपरिचित प्राणों से क्षण-भर कर प्यार-दुलार चले
हम मस्ताने इस जगती में कर मस्ती का व्यापार चले
हम कुचल हसरतें अपनी सब ले हार-जीत का दाँव चले
हम कभी रुलाते, कभी हँसाते, लेकर एक अभाव चले,
हम चले झूमते झुकते-से झंझा का कुछ आभास लिए
हम चले किसी पर कभी कहीं मर मिटने का विश्वास लिए
हम जला होलिका जीवन की खुल खेल मृत्यु से फाग चले
हम पाप-पुण्य से परे लिए अपना अनुराग-विराग चले।
हम किधर चले ? क्या बतला दें, चल दिए जिधर को राह मिली
हम जहाँ-जहाँ होकर निकले कुछ वाह मिली कुछ आह मिली

हम चले, चल पड़े क्योंकि हमें चलनेवालों का संग मिला
हम ऐसे ही अलमस्तों का कुछ रंग मिला, कुछ ढंग मिला,
हम जग से नाता तोड़ एक से अपना नाता जोड़ चले
हम भला-बुरा इस जीवन का सब आज यहीं पर छोड़ चले,
हम बिना दुआ-बंदगी किए चल दिए बिना कुछ कहे-सुने,
हम जीवन की मधुस्मृतियों के ले चले साथ कुछ फूल चुने,
हम कवि कहलाकर दो दिन को रचकर सुख-दुख के छंद चले,
हम प्रलय-पथिक प्रियके पथ पर कर अपनी पलकें बंद चले।

क्या कर लेती हो याद मुझे ?

मैं बढ़ता जाता हूँ पथ पर
अपने जीवन का भार लिए
संस्मृतियों की संचित गठरी में
पीड़ा का उपहार लिए

तुम अपने यौवन के मद में
मद-माती हो इतराती हो
बोलो अपने सुख-सपनों में
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(२)

मेरे श्वासों के तारों में
बीती की एक उसास भरी
तुमको पा घुल-मिल जाने की
मुझमें असीम अभिलाष भरी

पर तुम तो मृगतृष्णा बनकर
जीवन की प्यास बढ़ाती हो
फिर भी इस चरम-पिपासा पर
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(३)

कैसे संभव मुझ मानव से
दो हृदयों का व्यापार यहाँ
अपनी सीमाओं के बंधन
से ही इतना लाचार यहाँ

तुम परा-प्रकृति निस्सीम, चपल
चिर-सुन्दर जग की थाती ले
सच कहना, इस परवशता पर
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(४)

मम विरह-मिलन की आशा में
तुम हाय, क्षितिज बन गई वहीं
मैं जितना आता पास गया
तुम मुझसे उतनी दूर रहीं

मैं धोखा खाता फिर बढ़ता
तुम झूठी आश दिलाती हो
पर इन अविचल विश्वासों पर
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(५)

यौवन में अँगड़ाई लेकर
तुमने मानव को भरमाया
देकर अतृप्त तृष्णा उसको
तुमने युग-युग से तरसाया

कहते हैं तुम तड़पाने में
तरसाने में सुख पाती हो
पर तड़पन की विह्वलता पर
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(६)

माना तुमको अभिव्यंजन का
आकर्षण का अधिकार मिला
पर और नहीं तो कम-से-कम
मानव से तुमको प्यार मिला

जिसके बल पर मायावी बन
मन-चाहा नाच नचाती हो
बोलो व्यापार-विसर्जन पर
क्या कर लोगी तुम याद मुझे ?

(७)

बस एक तुम्हारे ही कारण
सब उँगली मुझे उठाते हैं
कोई कहता है पागलपन
कोई उन्माद बताते हैं

मैं सुनी-अनसुनी कर बढ़ता—
पाने को, तुम छिप जाती हो
अपनी इस आँख-मिचौनी पर
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(८)

प्रिय, जिस दिन मधुर तुम्हारी
वह सुस्मृति जीवन में शूल हुई
मैं सिसका, तड़पा, जग बोला
तुमसे यह भारी भूल हुई,

सुनते हैं मेरी भूलों पर
तुम मन-ही-मन मुसकाती हो
पर जग के भूले-भटकों में
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

(६)

तुमको मैंने कितना चाहा
इसकी तो कोई थाह नहीं
तुम मुझको चाहो तब चाहूँ
मेरी ऐसी भी चाह नहीं

केवल इतना ही पूछ रहा
बोलो क्यों नहीं बताती हो
क्षण-भर सूने में कभी-कभी
क्या कर लेती हो याद मुझे ?

आज तो मुझमें जवानी

चार दिन को हो भले ही, आज तो मुझमें जवानी,
आज साँसों में प्रभंजन
आज आहों में बवंडर
आज अंतर में हिलोरें
आज आँखों में समुंदर
दूर हो, सम्मुख न आओ, यह प्रलय की ही निशानी,
आज तो मुझमें जवानी।

सिंधुमंथन-सा हृदय में,
गिर रही है गाज ऐसी
इस प्रहर में, इस घड़ी में
मान कैसा, लाज कैसी
आज तो दो-एक होंगे, अब कहाँ अपनी-बिरानी,
आज तो मुझमें जवानी।

सुधि न तन-मन की मुझे कुछ
बढ़ रहा हूँ भुज पसारे
चल रहा हूँ, चल रहे हैं
जिस तरह रवि, शशि, सितारे

और पहुँचूँगा कहाँ पर ? यह भविष्यत् की कहानी,
आज तो मुझमें जवानी ।

आज दो लोचन किसी के
दे रहे मुझको निमंत्रण
आज यौवन पर, हृदय पर
है कठिन करना नियंत्रण
आज सारा तर्क भूला, आज सारा ज्ञान पानी
आज तो मुझमें जवानी ।

आज तो इतनी पिए हूँ
डगमगाते पाँव मेरे
हर डगर पर, हर क़दम पर
बिछ गए हैं भाव मेरे
एक मैं हूँ, दूसरी तुम, तीसरी आशा दिवानी,
आज तो मुझमें जवानी ।

जीर्ण यह तरणी तुम्हारी
क्या मुझे देगी सहारा
हाय, यौवन-ज्वार में है
सूझता किसको किनारा ?
तोड़ दो यह डाँड़ माँझी, फोड़ दो नौका पुरानी,
आज तो मुझमें जवानी ।

पनिहारिन

क्या कहूँ कि कैसी लगती थी
दो घड़े लिए वह पनिहारिन
आँखों में काजल सिर पर घट
अंगों में पनघट की छलकन

केशों की काली डोरी से
नयनों की गगरी बाँध चपल
भर-भर उड़ेलती रहती थी
मेरे मानस का खारा जल

मदभरी छलकती आँखों में
छिप सका कभी यौवन चंचल
इतना सम्हालने पर भी तो
गिर-गिर ही जाता था अंचल

अपने ही मधु की छलकन से
कुछ कंपित-सी, कुछ सिहरी-सी
फहरा-फहरा चंचल अंचल
वह लहराती लघु लहरी-सी

जब चलती, चलता साथ-साथ
अगणित मधुप्यासों का जीवन
जब रुकती, रुकती अभिलाषा
रुक जाता प्राणों का कंपन

वह पढ़ लेती थी मुसकाकर
चिर-उत्सुक नयनों की भाषा
छलकाती चलती थी पथ पर
मरुथल के पथिकों की आशा

फिर वह आगे बढ़ जाती थी
आँखों-आँखों में कह नाहीं
जैसे पथ पर कर स्नेह क्षणिक
आगे बढ़ जाता है राही

रह गए अंजुली कुछ रोपे
कुछ किए रहे आँखें संपुट
कुछ रहे देखते मधुमय-घट
कुछ छू पाए केवल तलछट

युग-युग से वह भरती गागर
युग-युग से आकुल अभिलाषा
फिर भी मधु की मृगतृष्णा में
मानव प्यासा का ही प्यासा।

खोज

जबसे वह मुझको एकाकी
पथ पर बिलखाता छोड़ गई—
तबसे मैं घूमा करता हूँ
पतझर से लूटे उपवन में
पीले पत्तों पर पढ़-पढ़कर
अपनी ही किस्मत का लेखा—

जब भटक पहुँच जाता हूँ मैं
कल-कोकिल-कूजित मधुवन में
कलि-किसलय में खोजा करता
उसकी स्मिति की ही मधु-रेखा

जब खो जाता हूँ कभी-कभी
जन-रव की भीषण हलचल में
टकटकी बाँध देखा करता
सबका मुख देखा-अनदेखा

सचमुच मुझको हैरानी है

कह देता स्नेह शलभ अपना
अपनी ही झुलसी पाँखों से
जो मैं कविता में लिखता हूँ
तुम कह देती हो आँखों से
सचमुच मुझको हैरानी है।

संगीत-मर्म बतला जाती
कोयल कू-कू की तानों से
मेरे गीतों का मर्म
बता देती हो तुम मुसकानों से
सचमुच मुझको हैरानी है।

ऊषा उड़ेल जाती मधुरस
नव-पंखुरियों की प्याली में
मेरी मस्ती का अर्थ
दिखातीं तुम अधरों की लाली में
सचमुच मुझको हैरानी है।

चिर जन्म-मरण हैं बँधे हुए
माया के विस्तृत अंचल में
तुम माया का संसार छिपा
लेती हो अपने कुंतल में
सचमुच मुझको हैरानी है।

कौतूहल

मेरे इस दीवानेपन पर तुमको क्यों होती हैरानी,
परिणाम यही होता जिसके उर में संचित आगी-पानी
तप बाष्प बन गया तन फिर भी यौवन-घन-मन आशा न भरी
विद्युत में कितनी कसक-कड़क, बादल में कितनी तड़प भरी ।

दो दिन में मिट जानेवाला यह प्रणयी का व्यवहार नहीं,
आदान-प्रदानों से सीमित मेरा जीवन-व्यापार नहीं
घुल-मिल जाने की अभिलाषा है अंत यहाँ अभिसार नहीं
उर-अंतरिक्ष की सीमा का सच कहता वारापार नहीं ।

जब तुमने अपनी नौका को प्रिय के वारिधि में बोर दिया
तुम पूछोगी फिर क्यों तुमने नित हाय-हाय का शोर किया
मैं कहता मुझको दोष न दो वह विरही का विह्वल मन था
अपने प्रिय के अन्वेषण में, आवाहन था, आराधन था ।

जब इस पथ पर चलते-चलते अपने प्रिय को पा जाऊँगा
चिर श्रान्त-क्लान्त सत्वर उसकी गोदी में मैं सो जाऊँगा
हिम-कण-सा किरणों में मिलकर उज्ज्वल प्रकाश बन जाऊँगा
जग याद करेगा व्यथा-कथा, मैं तो प्रिय में मिल जाऊँगा ।

अनुरोध

सजनि, बोलो, क्या हमारी साधना निर्मूल होगी ?
क्या सदा यों ही प्रणय की प्रार्थना प्रतिकूल होगी ?
मिट रहा हूँ किंतु प्रतिपल सोचता रहता यही हूँ
शूल सुस्मृति जो बनी है, क्या कभी वह फूल होगी ?

क्या कभी यह विरह-सरिता, सान्त्वना का कूल होगी ?
क्या सदा ही प्रणय-पथ पर उड़ रही यह धूल होगी ?
था किसे मालूम पुष्पों में छिपे हैं तीक्ष्ण कंटक
भूल इतनी हो चुकी है और कितनी भूल होगी ?

क्या तुम्हारी मधुर-स्मृति ही सुमन-जीवन-शूल होगी ?
क्या हमारी वेदना ही विश्व को सुख-मूल होगी ?
आज अनबोली हुई क्यों प्राण, इतना तो बता दो
क्या तुम्हारी दृष्टि मुझ पर फिर कभी अनुकूल होगी ?

मौन मत हो आज, तुमसे मैं प्रणय की भीख लूँगा,
छोड़ चल दोगी ? मुझे क्या खूब दिलभर चीख लूँगा,
हो चुका जो कुछ हुआ, बीते समय की बात भूलो,
सच बता दो, क्या कभी मैं प्यार करना सीख लूँगा ?

मिट सकूँ तुम पर, मुझे क्या यह कभी अधिकार होगा ?
क्या तुम्हारा और मेरा फिर नया संसार होगा ?
आज मृण्मयि, सोच लो, मिल लो, न फिर अवसर मिलेगा
कल न हम-तुम रह सकेंगे, जग रहेगा, प्यार होगा ।

सुस्मृति की झंझा के झोंके

अलस शिथिल पग नूपुर रञ्जित
अथ-इति-हीन मान-मद्-गंजित
कर पद्चापों की प्रतिध्वनि से
व्यथा कथा अभिव्यंजित
मुझे बाध्य करते बढ़ने को मेरा ही पथ रोके,
सुस्मृति की झंझा के झोंके

मुझ मानव का चिर-चञ्चल चित
आग और पानी से विरचित
ये दिन मुझे देखने पड़ते
हो संयोग स्नेह से वंचित
हाय, जलाते हैं मुझको, मेरे ही दीप सँजोके
सुस्मृति की झंझा के झोंके

सन्ध्या के नव नील गगन में
मेरे अलसाए यौवन में
बाँध प्रतीक्षा की डोरी से
आशा के चिर-सुखद स्वप्न में
मुझको ही बिछोह सिखलाते, मुझमें ही लय होके
सुस्मृति की झंझा के झोंके

मैं पल-पल लगता हूँ तपने
एक उन्हीं की माला जपने
उनकी वे बातें, मनुहारें
बन जातीं प्रभात के सपने
वे जागृति का पाठ पढ़ाते मेरे उर में सोके,
सुस्मृति की झंझा के झोंके

मैं हँसता-रोता रहता हूँ
अपने को खोता रहता हूँ
मन-मन्दिर की कालिख, साजन !
दृग-जल से धोता रहता हूँ
सम्भव है, उनको पा जाऊँ, अपने को ही खोके,
सुस्मृति की झंझा के झोंके,

प्राण, मुझको भूल जाओ

चाहता था स्वप्न में, मैं
सत्य का संसार पाना
चाहता था जड़-जगत में
मैं तुम्हारा प्यार पाना
किंतु सपने सच नहीं होते, मुझे तुम भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

कर सका अब तक तुम्हारी
मैं न कोई पूर्ण आशा
हूँ दुखी सचमुच, हुई
मुझसे तुम्हें इतनी निराशा
मैं न बन पाया तुम्हारे योग्य, मुझको भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

सरल सहृदयता तुम्हारी
एक क्षण सुखमूल थी वह
सजल पलकों से बताता हूँ
हमारी भूल थी वह
और भी जो कुछ हुई हो भूल मुझसे भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

सोचता था शांति जीवन की
तुम्हीं में खो सकूँगा,
कर स्वयं को लय प्रणय में
मैं तुम्हारा हो सकूँगा,
पर न मनचाहा जगत में पूर्ण होता, भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

लाभ क्या, तुमको सुनाने
आज यदि बैठूँ कहानी
क्या मिलेगा, यदि उभाड़ूँ
आज फिर बातें पुरानी
घाव सूखे फिर खुजाना भूल है, तुम भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

कह रहा हूँ जिस तरह मैं
हृदय मेरा जानता है
किंतु कैसे मौन बैठूँ
जब नहीं मन मानता है
अब न मुझमें शक्ति सहने की रही, प्रिय भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

हाय, मत सिहरो तनिक भी
आज मेरे देख दुर्दिन
तुम यही समझो कि वह तो
हो गया था साथ दो दिन

तुम कहाँ की, म कहाँ का, एक क्षण वह भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

क्यों दिखाऊँ आज तुमको
हृदय के अंगार सारे
जब कि नभ के शून्य उर में
जल रहे इतने सितारे
प्रणय में जलना नियम है, यह समझकर भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

जब समय जैसा पड़े सहना
वही अभ्यास रक्खो
मैं न जीवन भर सकूँगा भूल
तुम विश्वास रक्खो
आज इस विश्वास के बल पर मुझे तुम भूल जाओ,
प्राण, मुझको भूल जाओ।

तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

यों तो मेरे जीवन-पथ पर
कितने चाहक-गाहक आए
पर एक अकेले तुमने ही
मेरे हित आँसू बरसाए
तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

जैसे जलनिधि के माझी को
पथ-दर्शक नभ का तारा ही
वैसे ही ध्यान तुम्हारा प्रिय
जीवन में एक सहारा ही
तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

जैसे नव-जीवन का सँदेश
दे जाती ऊषा की लाली
वैसे ही तुमने भर दी थी
मधुरस से यौवन की प्याली
तुमको भूलूँ भी तो कैसे !

यद्यपि अपने सूनेपन पर
नादान चपल आँखें रोईं
फिर भी कुछ कम संतोष न था
अपना कहने को था कोई
तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

जैसे पतझर की झंझा में
मधु-ऋतु का मधु-उल्लास छिपा
त्यों मेरी साँसों की गति में
मेरा संचित विश्वास छिपा
तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

बहते-बहते पा जाती है
जैसे सरिता सागर-संगम
गाते-गाते तुममें ही लय
हो जाएगा गीतों का क्रम
तुमको भूलूँ भी तो कैसे ?

मेरा इसमें दोष नहीं है

मैं प्रिय का पथ अपनाता हूँ
जो जी में आता गाता हूँ
इतना कह सकता हूँ, मुझको तो अपना ही होश नहीं है,
मेरा इसमें दोष नहीं है।

सुख-दुखमय चिर-चंचल मन है
मानव हूँ, अपूर्ण जीवन है
इसीलिए तो इस जीवन से आज मुझे सन्तोष नहीं है,
मेरा इसमें दोष नहीं है।

आशा अभिलाषा का धन है
सब कहते मुझमें यौवन है
तुम्हीं बता दो यौवन-मद में कौन हुआ मदहोश नहीं है,
मेरा इसमें दोष नहीं है।

इसका कहीं नहीं इति-अथ है
जीवन अमर साधना-पथ है
दुनिया जो कहना हो कह ले, मुझे किसी पर रोष नहीं है,
मेरा इसमें दोष नहीं है।

कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं

चाहा, न जीवन पा सका
चाहा, न मृत्यु बुला सका
कैसी तुम्हारी रीति है, यह भी नहीं, वह भी नहीं
कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं।

क्यों लिपटने सुख से लगा
क्यों भागने दुख से लगा
जब जानता हूँ सत्य तो, सुख भी नहीं, दुख भी नहीं
कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं।

इस साधना से क्या हुआ
आराधना से क्या हुआ
यदि कर सका प्रिय का इधर, मुख भी नहीं, रुख भी नहीं
कुछ भी नहीं, कुछ भी नहीं।

मुझको न सुख-संसार दो

कुछ बात दिल की कह सकूँ
उपहास जग का सह सकूँ
सुख-दुःख में सम रह सकूँ, इतना मुझे अधिकार दो,
मुझको न सुख-संसार दो।

मैं नित नई पालूँ व्यथा
मेरी निराली हो कथा
जिसका न आदि न अंत हो, वह प्रेम-पारावार दो
मुझको न सुख-संसार दो।

साहस हृदय में दो अमर
चूमूँ तरंगों के अधर
नौका भँवर में डालकर, चाहे न फिर पतवार दो,
मुझको न सुख-संसार दो।

प्रिय, तुम इस पथ पर मत आना

अपनी अलसाई-सी आँखें
अपने यौवन का भार प्रिये
अपना सौरभ, अपना पराग
अपनी सुषमा का सार प्रिये
अपने में ही सीमित रक्खो अपना इठलाना इतराना
प्रिय, तुम इस पथ पर मत आना ।

प्रिय, तव-मधुबन की गलियों में
मधुरस से सिंचित है कण-कण
तुझमें फूलों का मधुर हास
शूलों से निर्मित यह जीवन
नव-नूपुर-रञ्जित पंकज-पग काँटों के पथ पर मत लाना
प्रिय, तुम इस पथ पर मत आना ।

मुझमें तो केवल रहने दो
अपनी स्मृति की ही चिनगारी
मैं देखूँ अपनी सीमा में
अपनी विह्वलता लाचारी
देखूँ यौवन, देखूँ संयोग, देखूँ प्रियतम का खो जाना,
प्रिय, तुम इस पथ पर मत आना ।

प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना

मलयज मारुत से सिहर-सिहर
पत्रों के अधरों पर मरमर
मुखरित कर वीणा के नव-स्वर
भर श्वासों में सौरभ-समीर तुम मेरी ओर न ले आना,
प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना।

मेरे सुख के दिन बीत गए
मधु-मादक प्याले रीत गए
हम हार गए तुम जीत गए
पर अब न कभी मृदु वयनों से मेरा सूना उर बहलाना,
प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना।

यह मानिक-मदिरा की प्याली
क्यों आज कर रहे हो खाली
मैंने पगली पीड़ा पाली
भर मानस में मकरंद मदिर अब बार-बार मत ढुलकाना
प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना।

मैं जी भर-भरकर रोया भी
छलना-सपनों में खोया भी
रोते-रोते हूँ सोया भी
पर अब न कभी तुम सपनों में थपकी से प्राण सुला जाना
प्रिय, मुझसे अब मत इठलाना ।

मेरे गान तुम मत सुनो

यत्न से कितने दबाए
था जिन्हें अब तक छिपाए
आज मेरे गान बरबस
कंठ में फिर उतर आए
आज मैंने रख दिया है हृदय अपना चीर
मेरे गान तुम मत सुनो।

देख मेरी चिर-विकलता
देख पग-पग पर विफलता
देख मेरे पलक भीगे
देख मेरा हृदय जलता
हा, कहीं तुम हो न जाओ आज स्नेह-अधीर
मेरे गान तुम मत सुनो

मुख मलिन, निःशब्द, कातर
देख मेरा वेष जर्जर
देख मुरझे हृत्कमल-दल
देख यह सूखा हुआ सर
हा, छलक आए न नयनों में तुम्हारे नीर
मेरे गान तुम मत सुनो।

मन विरागी राग से भर
कर रहा प्रतिध्वनित अंबर
आज अधरों की हँसी में
व्यंग का आभास पाकर
हा, न हो उट्ठे तुम्हारे हृदय में फिर पीर
मेरे गान तुम मत सुनो।

अतीत

अलि, उन सपनों को मत पूछो वे तो अब बीत चुके हैं,
प्यालों का मूल्य न माँगो वे तो अब रीत चुके हैं,
मत प्रिय को याद दिलाना वे मुझको भूल चुके हैं
बस अब मुरझा जाने दो हम भी फल-फूल चुके हैं ;
जीवन के यौवन-पट से हम उनको झाँक चुके हैं
प्राणों में प्रिय की प्रतिमा पीड़ा से आँक चुके हैं

× × ×

पथिक अमर है, अरे अमर यह, पीड़ा का व्यापार,
हम जाते हैं, बने रहें वे, बना रहे संसार।

आज अलि उनको बधाई

आज रवि-शशि-रश्मियों ने नव-प्रभा जग में जगाई
आज अलि उनको बधाई ।

आज कुंकुम रोचना से थाल उषा ने सजाया
आज नव-रवि समुद अपने साथ हीरक-हार लाया
आज प्रकृति वधू सजीली सज उठी बन-ठन निराली
आज माणिक मोतियाँ बिखरा रहीं मानस-मराली
आज शुभ-अभिषेक का सब साज ऊषा साज लाई
आज अलि उनको बधाई ।

आज प्राणों ने प्रणय का एक सुन्दर गीत गाया
आज युग-युग से प्रतीक्षित विकल हिय का मीत आया
आज भावों ने जगत में मानवी कुछ केलि कर ली
शून्य एकाकी हृदय की कल्पना से गोद भर दी
प्रणय की पुलकित प्रतीक्षा झूमती साकार आई
आज अलि उनको बधाई ।

आज कण-कण में हुई फिर व्याप्त आशा की निशानी
आज पल में उमँग आई सुप्त-सी साधें पुरानी

आज गद्‌गद हो हृदय ने प्रेम के दो बूँद ढाले
आज पंख हिला उठे अरमान के पंछी निराले
हूक-सी उठने लगी जब हृदय-डाली डगमगाई
आज अलि उनको बधाई ।

आज कोयल कह उठी मैं नेह-रस-वश कूक दूँगी
आज जग की वाटिका में एक जीवन फूँक दूँगी
आज मैं ऋतुराज का स्वागत करूँगी खोलकर उर
आज तन-मन-धन लुटा दूँगी उन्हें मैं मोल भर-भर
आज प्रियतम आ रहे हैं, साधना भी साथ आई
आज अलि उनको बधाई ।

आज रह-रह लुट रहे हैं चाहते-से चाव मेरे
आज मसृण मृदु ढुलकते हैं हृदय के भाव मेरे
आज कुछ सुस्निग्ध स्पंदन हो रहा सूने हृदय में
आज मिलना चाहते हैं स्वर हमारे अमर लय में
आज उस संगीत की स्वर-साधना फिर जाग आई
आज अलि उनको बधाई ।

आज घन होती सजनि, तो नेह जल से सींच देती
चित्रकार न हो सकी वह चित्र उनका खींच लेती
आज अपनी लेखनी की ओर ही मैं ताकती हूँ
एक अस्फुट रेख प्रिय के प्रेम की मैं आँकती हूँ

शब्द टूटे ही सही, अब प्रिय-मिलन की धुन समाई
आज अलि उनको बधाई ।

आज सुनती हूँ सजनि, हृदयेश का अभिषेक होगा
आज सुनती हूँ हमारा हृदय उनसे एक होगा
आज सुनती हूँ बनेंगे सत्य वे नायक हमारे
हम बनेंगी गीत उनके और वे गायक हमारे
आज चिर-आराधना परिपूर्ण-सी पड़ती दिखाई,
आज अलि उनको बधाई ।

मुझको तो हार अधिक भाती

अपने अभाव की गोदी पर
मैं खेली अपने जीवन-भर
जब प्यार मुझे पाने आता मैं अपने में ही खो जाती
मुझको तो हार अधिक भाती ।

कल्पित स्वप्नों में सिहर-सिहर
जब मेरा प्रिय आलिंगन कर-
आता है मुझे जगाने को, मैं चिर-निद्रा में सो जाती,
मुझको तो हार अधिक भाती ।

जग खोने में कर उठता दुख
मुझको खोकर ही मिलता सुख
मुझको संदेश अधिक मिलते जब मैं न कभी पाती, पाती
मुझको तो हार अधिक भाती ।

वे कहते मैं आकर्षण हूँ
मैं कहती आत्म-समर्पण हूँ
वे क्या जानें मिटने में ही मैं बनने का सुख पा जाती
मुझको तो हार अधिक भाती ।

प्रिय से करती मनुहार कभी
जब मैं जाती हूँ हार कभी
वे मुझको दुलराने आते, मैं सहमी-सी शरमा-जाती,
मुझको तो हार अधिक भाती।

प्रिय की स्मृति में तिल-तिल मिटती
मैं निशि दिन यह सोचा करती
कोई ऐसा भी मिल जाता जिसको यह जीवन दे जाती,
मुझको तो हार अधिक भाती।

आज जीवन भार क्यों है ?

साधना के पथ पर क्यों डगमगाते पाँव मेरे ?
आज रह-रहकर कसकते क्यों हृदय के घाव मेरे ?
आज प्राणों में प्रणय की मधुर-सी मनुहार क्यों है,
आज जीवन भार क्यों है ?

कौन कहता है नई यह प्रेम की मेरी कहानी
आज की, कल की नहीं, यह बात युग-युग की पुरानी
आज भी मानव-हृदय में एक विफल पुकार क्यों है
आज जीवन भार क्यों है ?

देख जड़ जग की विषमता जब निराशा घेर आती
कान में कहता हृदय, 'सुन, व्यर्थ आह कभी न जाती'
विजन-वन में फिर प्रकृति का हो रहा शृङ्गार क्यों है ?
आज जीवन भार क्यों है ?

मिलन

यह प्रकृति पुरुष का मधुर-मिलन स्पंदित कर देता कण-कण
इस प्रेम-राग की लहरी में जग भूला जीवन और मरण
खिल रही कली, हँस रहे सुमन, थपकी देती मन्थर बयार
पल्लव-पल्लव से फूट रहा, सुखमय सुहाग का आकर्षण।

फूलों से कलियाँ पूछ रहीं, ये कौन? कहाँ रहनेवाले
धीमी-धीमी फुलझड़ियों में वारिद्-प्रहार सहनेवाले,
फिर बोलीं ठहरो देखो तो सरिता विलीन है सागर में
योंही उठ-उठ गिर बार-बार ये साथ-साथ बहनेवाले

जिसमें जग सुख-दुख भूल सके, जीवन का चरम-विकास यही
उस पीड़ा की आकुलस्मृति में, प्राणों का पूर्ण प्रकाश यही
हँस-हँसकर कोमल फूल कह रहे हैं स्वर भरकर मधुर-मधुर
युगयुग जोड़ी आबाद रहे हम सबकी है अभिलाष यही,

खिलते ही रहे फूल उपवन में, सौरभ-वात चले हिलमिल
दो पत्ती चहक रहे हों अपनी अमर किलोलों में हिलडुल,
कोयल भी निशि-दिन रहे कूकती कर वसन्त का आवाहन
नित एक दूसरे को सदैव दो आँखें ढूँढ़ा करें विकल।

फैला हो नभ के प्राङ्गण में ऊषा सुहागिनी का अञ्चल
बिखरे हों जग की गोदी में, नव-प्रेमी के उच्छ्वास सजल,
हँसने रोने के अन्तर में पीड़ा का अमर वितान तने
चिर-मिलन प्रतीक्षा में बैठे हों बीत रहे जीवन के पल।

नूतन पथ, नूतन जग का क्रम, नूतन प्रणयी का प्रथम-मिलन
नूतन सन्ध्या, नूतन बहार, नूतन बयार, नूतन उपवन
जग के जीवन में नूतन है यह विरह-प्रेम का आलिङ्गन।
हे देव, तुम्हारे अभिनव-धन पर आज हमारा अभिनन्दन।

संघर्ष-प्रणय

वह भी दिन था मेरे पथ पर जब प्रिय ने रंगरलियाँ की थीं
गोल-गोल गोरी बाहों से ग्रीवा में गल-बहियाँ दी थीं
उनकी मोहक-मादकता से मदहोशी जगती ने ली थी
अनजाने में ही आँखों ने अपनी झोली फैला दी थी

युग-युग के प्यासे प्राणों ने अमर सुधा-रस पान किया था
नयनों ने नयनों से मिलकर अपनापन पहचान लिया था
मना किया पर हाय हठीली आँखों ने जब मान किया था
रोने के दिन दूर नहीं हैं इतना मैंने जान लिया था

चाहा भी था उनसे कह दूँ प्रिय तुम मेरे पास न आना
मैं मानव हूँ मेरे पथ पर मत अपना अंचल फैलाना
जीवन में संघर्ष छिड़ा है काँटों के पथ पर है जाना
संभव मुझसे हो न सकेगा प्रिये प्यार का नाज़ उठाना

जीवन-सरिता बड़ी प्रबल है थमतीं नहीं किसीकी बाहें
पग-पग पर प्रतिध्वनित हो रहीं कंगालों की कसक-कराहें
जग-जीवन के संघर्षण में नहीं सुनाई पड़तीं चाहें
धीमी-सी पड़ गई प्रिये हैं, प्यार और पीड़ा की आहें

सुख-दुख के झीने तागों से विधि ने विषम विश्व विरचा है
धूमिल-पथ है धूलि-कणों से कोई राही नहीं बचा है
दीनजनों की अश्रुधार से हरा-भरा जग गया रचा है
बाहर आकर तनिक निहारो, हाय-हाय का शोर मचा है।

धरा उर्वरा रह न गई है यहाँ प्रणय के बीज न बोना
सुंदर सुमन कटीले भी हैं इनकी डाली पर मत सोना
अपने सुख-दुख में विह्वल है आज जगत का कोना-कोना
नहीं पहुँच पाता महलों तक कभी झोपड़ी का दुख रोना।

पग-पग पर प्रलाप-सी करती छिपी यहीं पर प्रलय कहीं है
अब मैं फिर पीछे को लौटूँ इतना मुझको समय नहीं है।
लाचारी है, आखिर मैंने ऐसे युग में जन्म लिया है
जहाँ सभी ने रूपसुधा को छोड़ गरल का पान किया है।

मैं कर्तव्य-विवश था वरना तुममें निज को लय कर देता
तिल तिल निज अस्तित्व मिटाकर अपने को प्रियमय कर देता
किन्तु यहाँ प्रतिपल मुझसे ही कितने पड़े कराह रहे हैं
विदा, मिलेंगे और कभी, इस क्षण रण-भिक्षा चाह रहे हैं

विस्तृत-पथ है मेरे आगे उस पर ही मुझको चलना है,
चिर-शोषित असहायों के संग अत्याचारों को दलना है,
साहस हो तो आओ तुम भी मेरा साथ निभा दो थोड़ा
अगर नहीं तो अब तो मैंने उस जीवन से ही मुख मोड़ा

और कभी प्रतिध्वनित करोगी मधु गायन स्वर लहरी-मेरी
आज चाहती दुनिया सुनना मेरी वाणी में रण-भेरी।
इसीलिए तो छेड़ रहा हूँ अब मैं वह अलमस्त तराना
जाग उठें सोए अफ़साने, गूँज उठे विप्लव का गाना।

असमञ्जस

जीवन में कितना सूनापन
पथ निर्जन है, एकाकी है,
उर में मिटने का आयोजन
सामने प्रलय की झाँकी है

(२)

वाणी में हैं विषाद के कण
प्राणों में कुछ कौतूहल है
स्मृति में कुछ बेसुध-सी कम्पन
पग अस्थिर हैं, मन चंचल है

(३)

यौवन में मधुर उमंगे हैं
कुछ बचपन है, नादानी है
मेरे रसहीन कपोलों पर
कुछ-कुछ पीड़ा का पानी है

(४)

आँखों में अमर-प्रतीक्षा ही
बस एक मात्र मेरा धन है
मेरी श्वासों, निःश्वासों में
आशा का चिर-आश्वासन है ।

(५)

मेरी सूनी डाली पर खग
कर चुके बंद करना कलरव
जाने क्यों मुझसे रूठ गया
मेरा वह दो दिन का वैभव

(६)

कुछ-कुछ धुँधला-सा है अतीत
भावी है व्यापक अन्धकार
उस पार कहाँ ? वह तो केवल
मन बहलाने का है विचार

(७)

आगे, पीछे, दायें, बायें
जल रही भूख की ज्वाल यहाँ
तुम एक ओर, दूसरी ओर
चलते-फिरते कङ्काल यहाँ

(८)

इस ओर रूप की ज्वाला में
जलते अनगिनित पतंगे हैं
उस ओर पेट की ज्वाला से
कितने नंगे भिखमंगे हैं।

(९)

इस ओर सजा मधु-मदिरालय
हैं रास-रंग के साज कहीं
उस ओर असंख्य अभागे हैं
दाने तक को मुहताज़ कहीं

(१०)

इस ओर अतृप्ति कनखियों से
सालस है मुझे निहार रही
उस ओर साधना के पथ पर
मानवता मुझे पुकार रही।

(११)

तुमको पाने की आकांक्षा
उनसे मिल मिटने में सुख है
किसको खोजूँ, किसको पाऊँ
असमंजस है, दुस्सह दुख है

(१२)

बन-बनकर मिटना ही होगा
जब कण-कण में परिवर्त्तन है
संभव हो यहाँ मिलन कैसे
जीवन तो आत्म-विसर्जन है।

(१३)

सत्वर समाधि की शय्या पर
अपना चिर-मिलन मना लूँगा
जिनका कोई भी आज नहीं
मिटकर उनको अपना लूँगा।

चुपके-चुपके रोया न करो

आकुल नयनों में संपुट भर
अंदर ही अंदर घुट-घुट कर
ये बीज व्यथा के तुम अपने जीवन-पथ पर बोया न करो,
चुपके-चुपके रोया न करो।

मेरे जीवन का अपनापन
उनके जीवन का महँगापन—
संचित हैं इनमें हाय इन्हें सूनेपन में खोया न करो
चुपके-चुपके रोया न करो।

इससे मिल शांति नहीं सकती
इस जल से तो ज्वाला बढ़ती
अनुताप-भरे खारे जल से, उर के छाले धोया न करो।
चुपके-चुपके रोया न करो।

*

शशिबाला से

अंबर ब्रज-वन-बीथी की
मधुघट छलकाती ग्वालिनि,
मेरे नभ-मन-मानस की
मंथर गति मंजु मरालिनि

(२)

चल पंखों से नीला जल
पल-पल प्रक्षालित करती
सूने अंबरतट पर क्यों
एकाकी सदा विचरती ।

(३)

सुख-सरिता की लहरों पर
पंखों की कोर भिगोती—
क्यों भटक रही हो सुंदरि
चुगती तारों के मोती ?

(४)

झीना अवगुंठन डाले
चल-अंचल असित पसारे
झिलमिल, झिलमिल, झिलमिल कर
साड़ी के शुभ्र सितारे ।

(५)

घन के नीले घूँघट से
सरले क्या झाँक रही हो
क्या मूल्य हमारी प्यासी
आँखों का आँक रही हो ?

(६)

शशिबाले ! सुंदर मुख पर
चंचल नयनों की माया
सच कहता हूँ करती है
कंपित जग-जन की काया ।

(७)

मृदुहासिनि चिर मधुभासिनि
यौवन की लिए लुनाई
मेरी कल्पित आशा की
बनकर पुनीत परछाँई

(८)

आई हो नव-सपनों-सी
आँखों की आकुलता बन
चिर अलस उनींदे जग के
प्राणों की व्याकुलता बन

(९)

जब चलतीं जीवन-पथ पर
झुक झूम-झूम बल खाती
मधुवर्षिणि क्षण-भर में ही
कितना मधु बरसा जाती

(१०)

नभ के असीम आँगन में
जिस दिन तुम मुसकाई थीं
कितनी मधु अभिलाषाएँ
प्राणों में भर आई थीं

(११)

पागल पुलकों ने पल-भर
तुमको कुछ पहचाना था
मानस की मनुहारों में
जाना भी अनजाना था।

(१२)

किरणों की पिचकारी से
तुमने खेली थी होली
भर दी थी हाँ भर दी थी
अनुराग राग से झोली

(१३)

तुममें कितना मधु-सौरभ
तुम अब तक जान न पाई
तुम अपनी ही मादकता
अब तक पहचान न पाई

(१४)

तुम यौवन की अस्थिरता
तुम मृगलोचनि, मृगछौनी,
जग से लुक-छिपकर पल-पल,
तुम खेलीं आँखमिचौनी

(१५)

तुम प्रलय-सृजन-मय तन्मय
जीवन की अथक पहेली
मेरी अभिलाषाओं ने
तुमसे ही की अठखेली

(१६)

तुम युग-युग की परिभाषा
तुम मन की मधुर कल्पना
तुमको पा भूल गया मैं
अपने सुख-दुख का सपना

(१७)

निशि के तम-पूर्ण पटल पर
लेकर प्रकाश की रेखा,
जाने कितने दुखियों के
उर में तुमने क्या देखा ?

(१८)

तुमसे अब तक मानव ने
कुछ भी अपना न छिपाया
तुमने ही तो था उसकी
पीड़ा का मूल लगाया।

(१९)

केवल तुम जान सकी हो
जग का एकाकी जीवन
देखी हैं अपलक पलकें
सुन पाए नीरव-क्रंदन

(२०)

आशा का कुसुम मनोहर
तुमको लख फूल गया था,
कुछ विस्मृत-सा, बेसुध-सा
अपने को भूल गया था।

(२१)

तुममें ही आश्रय पाते
ये प्रणय विसुध मतवाले
कितनी आहों के शोले
तुमने शीतल कर डाले

(२२)

जड़-जग के संघर्षण से
जब मानव थक जाता है
तेरी शीतल छाया में
वह नव-जीवन पाता है

(२३)

निरखा करते हैं तुझको
युग-युग के प्यासे लोचन
जग क्या जाने, कहते क्या
नयनों के मौन-निमंत्रण

(२४)

जब तुम बढ़ती घटती हो
सिहरा करता व्याकुल मन
पाओगी इन आँखों में
निश्चल चकोर की चितवन

(२५)

मैं भी बनता मिटता हूँ
मेरा भी कुछ ऐसा क्रम
मुझमें भी असफलताएँ
मेरा भी जीवन विभ्रम

(२६)

शशिबाले, आओ, मेरे जीवन
में क्षण-भर आओ
निज अल्हड़ मादकता से
मेरा मानस भर जाओ।

हम बड़े विकट मतवाले हैं

हमको जग से भय ही क्या है, जब तक साक़ी हैं, प्याले हैं।

(१)

जब-जब पीड़ा ने जिद् ठानी
तब-तब हमने गहरी छानी
बेसमझे बूझे दुनियाँ ने
कह डाला उसको नादानी,
जग क्या जाने, हमने उर में पीड़ा के पंछी पाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(२)

हमको अपना कुछ ध्यान नहीं
कुछ काम नहीं, अपमान नहीं
हम दीवानों की दुनिया में
कुछ भले-बुरे का ज्ञान नहीं
हम भेद्-भावमय जगती के सब भेद् मिटानेवाले हैं
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(३)

जब मधु पी हम झूमा करते,
मदिरालय में घूमा करते
अपने सुख-दुख के प्यालों को
जब बार-बार चूमा करते
तब जग विस्मित कह उठता है इनके तो ठाट निराले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(४)

साक़ी बालाएँ देख खड़ीं
आँखें कुछ मचलीं और अड़ीं
जब उर का भार हुआ भारी
तब धीरे-धीरे बरस पड़ीं
आँसू क्यों ? फूट-फूट निकले जितने अन्तर में छाले हैं
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(५)

सुख में मैंने रोदन ठाना
दुख में मैंने गाया गाना
जब अपने को ही खो डाला
तब ही अपने को पहचाना
कोई क्या जाने, प्राणों ने कितने विप्लव कर डाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(६)

यह खोया और कमाया क्या ?
यह मुक्ति और यह माया क्या ?
जब मिटकर मिल जाना ही है
तब अपना और पराया क्या ?
हम अपने और पराये को मिल एक बनानेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं ।

(७)

इस जीवन का विश्वास किसे ?
इस पीड़ा का आभास किसे ?
वह मिलने की ही उत्कंठा
जग कह देता है प्यास जिसे,
हम प्यास-तृप्ति, मृगतृष्णा की उलझन सुलझानेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं ।

(८)

जब वीणा के स्वर मंद हुए
तब रास-रंग सब बंद हुए
जब हमने रोना सीख लिया
जग बोला ये तो छंद हुए
कविता कैसी ? हम पीड़ा का इतिहास बतानेवाले हैं,
हम बडे विकट मतवाले हैं ।

(९)

लो मेरे मधुघट छलक उठे,
प्यासे-मतवाले ललक उठे
लख लाल सुरा की लाल धार
बालक-बूढ़े सब किलक उठे,
मधु ढाल-ढाल, सबके हिय-जिय हम आज लुभानेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(१०)

हम करते हैं व्यापार नया
हम पा जाते हैं प्यार नया
बस कर में प्याला लेते ही
हम दिखलाते संसार नया
दिखला साक़ी की मधु झाँकी हम चित्त चुरानेवाले हैं।
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(११)

दिन हो या आधी रात रहे
पतझर हो या मधुवात बहे
पीनेवालों का मौसम क्या
ग्रीषम हो या बरसात रहे
हम तो कुछ अपने ही ढंग का संसार बसानेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(१२)

कुछ मस्त हुए लेकर प्याला
कुछ मस्त हुए पीकर हाला
मैं तो साक़ी को देख-देख ही
बन जाता हूँ मतवाला
देखूँ भी क्यों ? उनकी सुधि में हम सुध-बुध खोनेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(१३)

जब नियति तनिक प्रतिकूल हुई
तब सारी शेखी धूल हुई,
इस जग में आकर प्यार किया
मानव से इतनी भूल हुई
हम प्यार और पीड़ा का चिर-सम्बन्ध बतानेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

(१४)

हम मौज भरे गाने गाते
दो दिन इठलाते, इतराते,
अपनी नन्हीं मधुशाला में
इस पथ आते, उस पथ जाते
हम किसका-किसका साथ करें सब पी चल देनेवाले हैं,
हम बड़े विकट मतवाले हैं।

गौरय्या

मेरे मटमैले अँगना में
        फुदक रही गौरय्या

कच्ची मिट्टी की दीवारें
        घास-पात का छाजन
मैंने अपना नीड़ बनाया
        तिनके-तिनके चुन-चुन
यहाँ कहाँ से तू आ बैठी
        हरियाली की रानी
जी करता है तुझे चूम लूँ
        ले लूँ मधुर बलय्या
मेरे मटमैले अँगना में
        फुदक रही गौरय्या।

नीलम की-सी नीली आँखें
        सोने-से सुन्दर पर
अंग-अंग में बिजली-सी भर
        फुदक रही तू फर-फर

फूली नहीं समाती तू तो
मुझे देख हैरानी
आ जा तुझको बहन बना लूँ
और बनूँ मैं भय्या
मेरे मटमैले अँगना में
फुदक रही गौरय्या।

मटके की गरदन पर बैठी
कभी अरगनी पर चल
चहक रही तू चिउँ-चिउँ-चिउँ-चिउँ
फुला-फुला पर चंचल
कहीं एक क्षण तो थिर होकर
जा तू बैठ सलोनी
कैसे तुझे पाल पाई होगी
री, तेरी मय्या
मेरे मटमैले अँगना में
फुदक रही गौरय्या।

सूक्ष्म वायवी लहरों पर
सन्तरण कर रही सर-सर
हिलाहिला सिर तुझे बुलाते
पत्ते कर-कर मर-मर

तू प्रति अंग उमंग-भरी-सी
पीती फिरती पानी
निर्दय हलकोरों से डगमग
बहती मेरी नय्या
मेरे मटमैले अँगना में
फुदक रही गौरय्या ।

तितली

ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

किस स्नेह-दीप की ज्वाला से
निर्मित तेरी स्वर्णिम काया
किस उमड़ी-घुमड़ी श्याम मेघमाला
की मिली तुझे छाया
तू अपनी चंचल चितवन से, लगती है कितनी भली-भली
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

तेरी साँसों में मलयवास
तेरी गति में अगणित कंपन
खिलने के पहले कलिका के
अधरों की मोद-भरी सिहरन
प्रस्फुटित अबोध कामना-सी, तू है सजीव अधखिली कली
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

किंजल्क-गेह में जन्मप्राप्त
सुषमा के सौरभ-सी चंचल
दो ही दिन में तू रँग चली
मधु की बूँदों-सी तरल-सजल

किस कमल-नाल किस मधु-पराग से भीनी-भीनी तू निकली,
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

तू उड़ी किंतु बाहर संसृति
कुछ-कुछ कुरूप, कुछ-कुछ कठोर
तू लौट पड़ी फिर उपवन में
सहसा तन-मन में प्रश्न और
क्या सह न सकी जग की ज्वाला या अपने से ही गई छली,
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

तन्वंगी तेरे अंगों पर
कुसुमों की आभा गई बिखर
जड़-प्रकृति हो उठी चेतन-सी
लग गए पँखुरियों के ही पर
तू सुन्दर सुमनों की दुहिता चल-किसलयदल में पली खिली,
ओ इन्द्रधनुष के रंगवाली, सतरंगी, बहुरंगी तितली !

तू फूल-फूल, डाली-डाली
सगी की खोज लिए डोली
खिल-खिल करती ले आ पहुँची
चिर-चपल बालकों की टोली
तू भी चपला-सी चमक उठी, भागी लुक-छिपकर गली-गली,
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

मिल गए सृष्टि के दो विधान
अधरों पर स्मिति है गई बिखर
देखो धीरे से, पर न नुचें
आखि़र मानव के ही हैं कर
ई—चीख निकल आई शायद तू बातों-बात सरक निकली,
ओ इन्द्रधनुष के रँगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

तू ही तो मालुम पड़ती है
मधुऋतु के यौवन की रानी
सौ-सौ रूपों में, रंगों में
होती तेरी ही अगवानी
तू ही है कुसुमों की शोभा भाता न यहाँ पर असित अली,
ओ इन्द्र धनुष के रंगवाली, सतरंगी, बहुरंगी, तितली !

तीन चित्र

(१)

मुझे याद है अपना शैशव
धूल-भरे माँ की गोदी में
मेरा तुतला-तुतला कलरव
फूटा कंठ एक दिन सहसा
बातों-बातों कुछ कह निकला
स्नेहस्निग्ध कल-कल छल-छल
मेरा जीवन-सोता बह निकला
क्या सचमुच नैसर्गिक शैशव,
पानी का सोता होता है ?

(२)

छाया है यौवन का वैभव
नयनों में सोने के सपने
श्रवणों में गुंजित स्वर नव-नव

सृष्टि, तुम्हारी सुंदरता पर
उत्पाती मन जूझ रहा है
मुझ सावन के अंधे को
सब हरा-हरा ही सूझ रहा है
क्या सचमुच सबके जीवन में,
यौवन का भी युग होता है ?

(३)

और जरा का जीर्ण पराभव
बड़ा कठोर सत्य है, उसको
नहीं कल्पना करना संभव
सब कहते हैं सुमन, तुम्हारी
कुम्हला जाएँगी पंखुरियाँ
पीले पत्तों से शरीर में
रह जाएँगी प्रमुख झुर्रियाँ
क्या वसंत का अंत सदा से
जरा-जीर्ण पतझर होता है ?

लो आ गया पतझार भी

सब पात पीले पड़ गए
कुछ बच रहे, कुछ झड़ गए
फिर वर्ष बीता एक यह, बीती वसन्त-बहार भी,
लो आ गया पतझार भी।

कुछ वृष्टि के, हेमंत के
कुछ ग्रीष्म और वसंत के
दिन बीतते ये जा रहे, बन-मिट रहा संसार भी,
लो आ गया पतझार भी।

था कल वसन्त यहाँ हँसा
अलि, कुसुम-कलियों में फँसा
जड़ और चेतन में हुई क्षण एक आँखें चार भी,
लो आ गया पतझार भी।

अब वह न सौरभ वात में
अब वह न लाली पात में
अवशेष यदि कुछ तो निशा के आँसुओं का हार ही,
लो आ गया पतझार भी।

इस आह का क्या अर्थ है !
दुख-सुख सुनाना व्यर्थ है ?
लौटा नहीं प्रिय को सकी, पिक की अशांत पुकार भी,
लो आ गया पतझार भी ।

जिसमें विलीन वसंत है,
उस शून्य का क्या अंत है ?
क्या शून्य में ही लय कभी होगा हमारा प्यार भी,
लो आ गया पतझार भी ।

हा 'प्रसाद्' !!

असमय यह कैसा दुःख भार ?

(१)

क्या कहा कि कविता-बाला के
मुख पर सुस्मित आह्लाद नहीं ?
क्या कहा कि माँ के मंदिर में
मिल सकता आज 'प्रसाद्' नहीं ?
क्या माँ की जीर्ण-शीर्ण कंथा का लाल खो गया, हुआ ज्ञार ?
असमय यह कैसा दुःख भार ?

(२)

ऊषा के खूनी हाथों ने
यह कार्य्य निपट नत, हीन किया
हिन्दी के लाल लड़ैते को
माँ की गोदी से छीन लिया
विधि ! विश्व-सृजन फुलवारी के कुसुमों पर ऐसा पद-प्रहार ?
असमय यह कैसा दुःख भार ?

(३)

रे क्रूरकाल, कल ही तूने
ले लिया 'प्रेम' दे चिर-विषाद,
निर्मम, कह क्यों फिर छीन लिया
यह बचा-खुचा माँ का 'प्रसाद' ?
अन्यायी, तूने सीखा है करना निर्बल पर ही प्रहार ?
असमय यह कैसा दुःख भार ?

(४)

जगतीतल के आदर्श रूप
ओ अभिनव युग के सूत्रधार,
ओ मृतप्रायों के उन्नायक,
ओ तुम मानवता की पुकार,
तुमको नभतारक खोज रहे अगणित दृग द्वारों से निहार,
असमय यह कैसा दुःख भार ?

(५)

कवि ! तव प्रयाण की वेला में
रोए जड़-चेतन साथ-साथ
रो पड़ा विश्व-साहित्य आज,
रो पड़ी बाल-हिन्दी अनाथ,
मंजुल मुखरित कवि-वीणा के सब अस्तव्यस्त हो गए तार,
असमय यह कैसा दुःख भार ?

(६)

कवि ! इस संक्रमण-काल में तुम
सहसा हमसे मुख मोड़ गए,
तुम चले गए पर हाय हमें
'दुर्दिन के आँसू' छोड़ गए
दुख-दैन्य-ताप-संताप-युक्त झुलसी उपवन की डार-डार
असमय यह कैसा दुःख भार !

(७)

लो रुद्ररूप बन गया आज
मेरा विराट-कवि प्रलयंकर
घर-घर काशी में गूँज रहा
जय जयति-जयति जय 'जयशंकर'
प्रति आँखों में वह भूल रहा, प्रति जिह्वा में उसकी पुकार,
असमय यह कैसा दुःख भार !

विश्वास फिर कैसे करूँ ?

लख स्नेहमय तुमको सदय
अनुभव-रहित बालक-हृदय
करने लगा अनुनय-विनय
तुमने उसे पुचकारकर दुत्कार व्यर्थ रुला दिया
विश्वास फिर कैसे करू ?

वे वेदना से पूर्ण स्वर
दिन-रात जिनका गान कर
था कर दिया तुमको अमर
मेरे हृदय का वह सुखद-संगीत हाय भुला दिया,
विश्वास फिर कैसे करूँ ?

कितनी विकल पहिचान से
कितने सरल अभिमान से
कितने भरे अरमान से
जब था उठा प्याला लिया, तुमने उसे छलका दिया ?
विश्वास फिर कैसे करूँ ?

क्यों सबसे आशा रखते हो ?

जग अपूर्ण है, तुम अपूर्ण हो
अपनी सीमाएँ पहचानो
जिस-तिस से मत नेह लगाओ
कुछ तो सोचो, समझो, जानो
सबको अपने-सा समझे हो, नाहक अभिलाषा रखते हो ?
क्यों सबसे आशा रखते हो ?

(२)

मानव का मनचाहा जग में
कभी नहीं पूरा होता है
इच्छाओं की मृगतृष्णा में
क्यों तू अपने को खोता है ?
तृप्ति तुम्हारे ही अंतर में क्यों कहते प्यासा रहते हो ?
क्यों सबसे आशा रखते हो ?

(३)

साथी, इस कर्त्तव्य-जगत में
मानव बनकर जीना होगा
अपने सुख-दुख के प्यालों को
जैसे भी हो पीना होगा
चलते चलो, करो जो करना, व्यर्थ निराशा से डरते हो ?
क्यों सबसे आशा रखते हो ?

(४)

तुम हो प्रलय-सृजन के कर्त्ता
सुख-दुख तो होते रहते हैं
हँसते, रोते बढ़ते जाओ
इसको ही जीवन कहते हैं,
कुछ उल्टी-सीधी-सी तुम जीवन की परिभाषा रखते हो,
क्यों सबसे आशा रखते हो ?

गुप्तजी की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर

ओ कवि, ओ गायक, ओ साधक, ओ स्वर-सत्ताधारी,
ओ सरस्वती के मंदिर के अविचल, अचल, पुजारी,
आज तुम्हारे स्नेह-कणों से आर्द्रित हो प्लावित हो,
हरी-भरी, फल-फूल रही है काव्य-कला-फुलवारी ।

आज तुम्हारी शुचि स्वर-लहरी, मधुर-प्रभाती लोरी
लूट रहे हैं गीत तुम्हारे सबके दिल बरजोरी
और तुम्हारी ही इङ्गित पर हँसती-रोती दुनिया
ओ कवि, क्षण-भर कर लेने दो अपने मन की चोरी ।

ओ अनुरागी, ओ वैरागी, ओ योगी-संन्यासी,
ओ हिन्दी के प्राण, प्रणय के ओ असीम विश्वासी,
देखो, वीणा-वादिनि वीणा बजा-बजा कहती हैं—
रहे तुम्हारी कीर्ति चिर अमर ओ चिरगाँव-निवासी !

आज तुम्हारा स्वर्णजयन्ती-दिवस सहर्ष मनाने
प्रकृति-वधू सजकर आई है नये साज, नव बाने,
ताप-तप्त जग आज देख लो हरा-भरा हो आया
कोयल लगी कूकने, बुलबुल गाने लगी तराने ।

विषम जगत के घात और प्रतिघात सह लिए सारे,
किंतु न विचलित हुए एक क्षण विश्व-वेदना धारे,
मनमानी कर स्वयं नियति भी बहुत-बहुत पछताई
हारी, थकी, पराजित-सी वह बैठ गई मनमारे।

स्वर्ण-वर्ण-युत चमक उठे तुम ओ साहसी-सयाने,
छीन तुम्हारे दो लालों को विधि मन में पछताने,
विश्व दंग है देख तुम्हारी निपट-अटपटी मस्ती,
जब-जब दुख बढ़ने लगता है, तुम लगते हो गाने।

आज तुम्हारे जन्मदिवस पर बाल-वृद्ध नर-नारी
चढ़ा रहे हैं श्रद्धांजलियाँ चरण-चरण पर वारी,
सहस-सहस साँसों से मिलकर निकल रहे हैं स्वर ये
कवि! तुम युग-युग जिओ,जिए यह चिर-साधना तुम्हारी।

कौन सुनेगा क्रन्दन मेरा ?

छंदों में उद्गार लपेटे
अपना सारा प्यार समेटे
किसी अपरिचित में लय करने दर-दर घूमा यौवन मेरा,
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

सुख-दुख की सीमा के ऊपर
स्वप्नों का संसार मनोहर—
जड़ जग के संघर्षण में पड़ क्षीण हो रहा छिन-छिन मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

अपनी-अपनी प्यास यहाँ पर
किसको है अवकाश यहाँ पर
किसने जाना सूख रहा है आशाओं का उपवन मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

सच है मैंने प्यार न पाया
निज कल्पित संसार न पाया
किन्तु अभागों की दुनियां में नया नहीं हिय-मंथन मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

है सारा संसार सुखी क्या ?
केवल मैं ही एक दुखी क्या ?
यही समझ धीरज धर लेता यह निष्फल-सा जीवन मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

पीड़ित, पतित, दलित, निर्बल में
दुखी जगत के कोलाहल में—
मिल, वैभव के प्रासादों पर क्यों न हँस पड़े खँड़हर मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

क्यों न प्रलय का रास रचा दूँ
क्यों न प्रणय में क्रान्ति मचा दूँ
क्यों न जगत के स्वर में मिलकर प्रलय-गान गाए मन मेरा ?
कौन सुनेगा क्रंदन मेरा ?

जागरण

यह क्रांति-क्रांति की प्रतिध्वनि से
क्यों गूँज उठी जगती सारी ?
क्या सचमुच घर-घर सुलग गई
नव-निर्माणों की चिनगारी ?

टूटी - फूटी झोंपड़ियों से
उठता यह कैसा कोलाहल ?
क्या पतित-पददलित युग-युग के
कुछ आज हो उठे हैं चंचल ?

क्यों काँप रहे प्रासाद धवल
भिखमंगों की हुंकारों से ?
क्या निकले ज्वालामुखी फूट
कंकालों के अम्बारों से ?

जल - थल - अबर में फैल रहा
यह कैसा हाहाकार प्रबल ?
किसका विनाश करने निकला
कह इन्क़लाब का दावानल ?

'जय हो मज़दूर किसानों की'
कहता तूफ़ान उठा भारी
लो उल्टे रस्ते भाग चले
कल के शोषक, अत्याचारी

क्या सचमुच इनके दिन जागे
या यह केवल प्रत्याशा है ?
सब आँखें फोड़ देख रहे
यह कैसा अजब तमाशा है ?

भीषण तोपें, हत्यारे
छिप गए कहीं मुख मोड़े से
आश्चर्य, विश्व कर लिया विजय
हँसिए से और हथौड़े से ?

दो हड्डी पिचके गालों के
गर्जन में यह घनघोर छिपा
किसने जाना भूखे मन, सूखे तन में
इतना जोर छिपा ?

बस एक बार में ही सारा
क्रम पलट दिया इस जीवन का
आशा से मानस भर आया
चिर शोषित, निर्बल, निर्धन का

देखो वे नंगे भिखमंगे
आए हैं नूतन वेष लिए
अब तक की जर्जर जगती में
नवयुग का नव-संदेश लिए

आओ, उट्ठो, देरी न करो
उनका स्वागत करना होगा
सुख--शांति--स्नेह समभावों से
जग का अंचल भरना होगा।